एक प्रति : पांच रुपये

वर्ष 34 4 - 17 अक्टूबर 2025 अंक 30-31

समकालीन लोकयुद्ध

भाकपा (माले) का केन्द्रीय हिंदी मुखपत्र

गांधी के कातिल आज भारत पर राज कर रहे हैं. पार्थ बनर्जी, जिन्होंने बीस साल आरएसएस और एबीवीपी में गुजारे और फिर उस विचारधारा व संगठन से नाता तोड़ लिया, बता रहे हैं कि गोडसे बनाम गांधी का टकराव किस तरह आरएसएस की असली पहचान को उजागर करता है.

#गांधीजयंती2025 #RSS100साल

@Dipankar_cpiml

सोनम वांगचुक को रिहा करो ! लद्दाख की जनता को राज्य का दर्जा और छठी अनुसूची की सुरक्षा प्रदान करो!

मोदी सरकार ने लद्दाख के सुविख्यात पर्यावरण कार्यकर्ता और अन्वेषक सोनम वांगचुक को राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए खतरा बताते हुए जोधपुर (राजस्थान) की जेल में एकांत कारावास में डाल दिया है. उन्हें 24 सितंबर को लेह में हुए पुलिस दमन, जिसमें चार लोग – जिगमत दोर्जे (25), स्टैनिजन नमग्याल (23), रिनचेन दादुल (20), तथा पूर्व कर्मचारी तेवांग थारचिन (46) की मौत हो गई थी और कई अन्य लोग घायल हो गए थे, के बाद गिरफ्तार किया गया. नेपाल में नौजवानों के विद्रोह के बाद जेन जी का हौवा मोदी सरकार को भी सताने लगा है. लद्दाख में दमन और धर-पकड़ की कार्रवाई असंवेदनशीलता, अक्षमता, उद्दंडता और क्रूर दमन को ही उजागर करती है, जो कश्मीर से लेकर मणिपुर और हरियाणा से लेकर बिहार तक पूरे देश में भाजपा शासन के चिन्ह बन गए हैं.

हमलोगों को याद आता है कि सोनम वांगचुक और लद्दाख की जनता ने धारा 370 खत्म किए जाने के बाद की नई व्यवस्था का किस तरह से स्वागत किया था जब जम्मू और कश्मीर के साथ साथ लद्दाख को भी केंद्र शासित प्रदेश का दर्जा दिया गया था. लद्दाख के लोगों को आशा थी कि पारिस्थितिक रूप से नाजुक और सामरिक रूप से संवेदनशील इस हिमालयी क्षेत्र को केंद्र शासित प्रदेश बनाने से यहां के स्थानीय निवासियों की दावेदारी बढ़ेगी तथा शक्ति के विकेंद्रीकरण का मार्ग प्रशस्त होगा. लेकिन अनुभवों ने दिखाया कि लद्दाख ने वे शक्तियां भी खो दीं जो उसे पूर्व की व्यवस्था में हासिल थीं. पहले अगर लेह को श्रीनगर ही दूर लगता था, तो अब दिल्ली तो उनमें और ज्यादा दूरी व अलगाव का अहसास करा है. किसी विधायिका के अभाव में केंद्र शासित प्रदेश की स्थिति ने लद्दाख को केंद्र शासित और दूर से नियंत्रित नगरपालिका की हालत में धकेल दिया जिसके पास स्थायी विकास अथवा बेरोजगार स्थानीय नौजवानों को रोजगार देने के लिये कोई भी निर्णयकारी अधिकार नहीं है.

इसीलिए अलग राज्य का दर्जा और संविधान की छठी अनुसूचि के तहत सुरक्षा की मांग लद्दाख की जनता के इसी कड़वे अनुभव से पैदा हुई है. शुरू में भाजपा ने भी लद्दाख को छठी अनुसूची की हैसियत देने का समर्थन किया था. लेकिन जैसे ही बौद्ध-प्रधान लेह और मुस्लिम-बहुल कारगिल में इस मांग पर लोकप्रिय आन्दोलन की शुरूआत हुई और सोनम वांगचुक इस आन्दोलन के सबसे विश्वसनीय व करिश्माई चेहरा के बतौर उभरे, मोदी-शाह निजाम की बोली बंद हो गई और उसने इस मांग पर पूरा नकारात्मक रुख अख्तियार कर लिया. अनेक पर्यावरण उपवासों, सितंबर 2024 में 'लेह एपेक्स बॉडी' व कारगिल डेमोक्रैटिक अलायंस के तत्वावधान में लेह-लद्दाख पदयात्रा, और अब इस सितंबर की भूख हड़ताल जैसे बड़े लोकप्रिय आन्दोलनों में जब यह मांग उठने लगी, तो केंद्र सरकार ने इसे पूरी तरह से अनसुनी कर दिया.

लद्दाख की जनता के किसी भी प्रमुख मांग का कोई प्रत्युत्तर न मिलने और शांतिपूर्ण प्रतिवादों से निपटने में की गई पुलिसिया ज्यादतियों की वजह से ही 24 सितंबर को तोड़फोड़ और हिंसा की वारदात हुई. सोनम वांगचुक ने अराजकता और पूलिस दमन के सामने प्रतिवाद वापस ले लिया, किंतु फिर भी समूचे आन्दोलन को पाकिस्तान, नेपाल और चीन समेत भारत के पड़ोसी मुल्कों द्वारा भड़काई गई 'विदेशी साजिश' के बतौर चित्रित किया जा रहा है. इस तथ्य को कि वे पाकिस्तान में आयोजित एक पर्यावरण सम्मेलन में शामिल हुए थे और उनके एनजीओ को 'खाद्य सुरक्षा' से संबंधित परियोजनाओं के लिए कुछ विदेशी फंड मिले थे, अब लद्दाख की शांतिपूर्ण जनता को उकसाने वाले 'विदेशी एजेंट' के बतौर सोनम की तथाकथित भूमिका का प्रमाण बताया जा रहा है. एक अन्वेषक, जिन्होंने लद्दाख के ठंडे हिमालयी क्षेत्र में तैनात भारतीय सैनिकों के लिए सौर उर्जा से गर्म रहने वाले तंबुओं का डिजाइन बनाया था, को अब भारत का दुश्मन बताया जा रहा है और उन्हें एकांत कारावास में डाल दिया गया है.

मोदी सरकार ने धारा 370 हटाकर जो दुस्साहस किया, उसका नतीजा अब जम्मू व कश्मीर तथा लद्दाख में दिख रहा है. पहलगाम में आतंकी हमले से घाटी को अधिक सुरक्षित बनाने का सरकारी दावा झूठा साबित हो गया. मोदी सरकार की योजनाएं जम्मू, कश्मीर घाटी अथवा लेह और कारगिल में स्थानीय जनता की आकांक्षाओं को रौंदते हुए उस क्षेत्र में कॉरपोरेट लूट को बढ़ावा देने के गिर्द घूम रही हैं. जहां विख्यात लेखकों द्वारा कश्मीर के इतिहास तथा कश्मीर संकट के विभिन्न पहलुओं पर लिखी किताबों को प्रतिबंधित किया जा रहा है, वहीं लद्दाख के चरागाहों को अडानी ग्रुप की तथाकथित हरित ऊर्जा योजनाओं के लिए आरक्षित करने की कोशिश की जा रहा है. घाटी के लोगों के अंदर लंबे समय से मौजूद अलगाव की गहरी भावना अब जम्मू और लद्दाख में भी फैल गई है जहां के लोग अब बिल्कुल ठगा हुआ महसूस कर रहे हैं. धारा 370 हटाये जाने के बाद लद्दाख की जनता के लिए नया अध्याय खुलने की आशा करने वाले तमाम लोगों को आज सोनम वांगचुक की तत्काल नि:शर्त रिहाई की मांग करनी चाहिए और अलग राज्य का दर्जा व छठी अनुसूची के तहत संवैधानिक सुरक्षाओं के लिए लद्दाख की जनता के संघर्षों के पक्ष में खड़ा हो जाना चाहिए. ■

भारत में इतिहास खतरे में है

ऑड्री ट्रशके

[**ऑड्री ट्रशके** अमेरिका के न्यू जर्सी स्थित रटगर्स यूनिवर्सिटी में दक्षिण एशिया इतिहास की जानी-मानी एसोसिएट प्रोफेसर हैं. उनका शोध भारत के शुरुआती आधुनिक और आधुनिक दौर के समृद्ध और जटिल इतिहास पर गहराई से रोशनी डालता है, खासकर मुगल दौर और उसकी सांस्कृतिक विरासत पर. ट्रशके ने कई महत्वपूर्ण किताबें लिखी हैं, जिनमें कल्चर ऑफ एनकाउंटर्स: संस्कृत एट द मुगल कोर्ट शामिल है, जो मुगल शासन के दौरान संस्कृत और फारसी साहित्यिक परंपराओं के जीवंत आदान-प्रदान को दिखाती है, और औरंगजेब: द मैन ऐंड द मिथ, जिसमें इस विवादास्पद बादशाह का संतुलित पुनर्मूल्यांकन करते हुए पुरानी धारणाओं को चुनौती दी गई है.

उनकी ताजा किताब इंडिया: 5,000 इयर्स ऑफ हिस्ट्री ऑन द सबकॉन्टिनेंट पूरे उपमहाद्वीप के इतिहास को पेश करती है – सिंधु घाटी सभ्यता से लेकर आजादी के बाद के उथल-पुथल भरे दौर तक. इसमें 1990 के दशक के जातीय संघर्ष और हिंदुत्ववादी राजनीति के उभार को भी शामिल किया गया है. यह बड़ा काम दिद्दाता है कि कैसे हजारों सालों के प्रवास, व्यापार और सांस्कृतिक आदान-प्रदान से भारत ने दुनिया को लगातार प्रभावित किया. ट्रशके उपमहाद्वीप के शुरुआती निवासियों पर रोशनी डालती हैंख्नवे प्रवासी जिन्होंने शहरी सभ्यता की नींव रद्दी और वेदों की रचना की, जो दुनिया की सबसे पुरानी साहित्यिक परंपराओं में से एक है. उनके दृष्टिकोण का मुख्य आधार हाशिए पर पड़ी आवाजों –खासकर महिलाओं और दबे-कुचले तबकों – को मजबूती देना है, ताकि भारत के अतीत को ज्यादा समावेशी नजरिए से समझा जा सके.

हालांकि अकादमिक हलकों में ट्रशके के काम की काफी कद्र है, पर हिंदू दक्षिणपंथी ताकतों ने इसे लेकर कई बार विवाद खड़ा किया है. भारत के बहुधर्मी और बहुसांस्कृतिक अतीत पर उनकी बारीक पड़ताल, खासकर मुगल दौर पर, उनके सांप्रदायिक एजेंडे को चुनौती देती है. पहली किताब छपने के बाद से ही उन्हें लगातार ऑनलाइन हमलों, नफरती मेल, सोशल मीडिया ट्रोलिंग और हिंदुत्ववादी संगठनों की ओर से सेंसर करने की मांग जैसी मुश्किलों का सामना करना पड़ा. इन सबके बावजूद वे इतिहास को गहराई और विविधता के साथ समझने-समझाने की अपनी कोशिश में डटी हुई हैं.

इस इंटरव्यू में ट्रशके बताती हैं कि वे इतिहास लिखने का नजरिया कैसे अपनाती हैं, पेचीदा अतीत पर लिखते समय किन चुनौतियों से गुजरती हैं, और आज के दौर की बहसों में इतिहास क्यों मायने रद्दता हैख्नताकि लोग उनके काम और उसके असर को समझ सकें.]

सवाल : आपने 5,000 साल के भारतीय इतिहास को एक ही किताब में समेटने की चुनौती को कैसे लिया, और किन मुद्दों को सबसे अहम माना?

जवाब : भारतीय इतिहास की कोई एक ही कहानी नहीं है. इसलिए मैंने अलग-अलग किस्सों को साथ लाने की कोशिश की, जिनमें बार-बार आने वाले कुछ अहम विषय शामिल हैं – जैसे विविधता, प्रवास (माइग्रेशन), सामाजिक असमानता और जलवायु परिवर्तन.

सवाल : किताब में आपने उपमहाद्वीप में इंसानी तजुर्बों की विविधता पर जोर दिया है. हाशिये पर पड़े लोगों की कहानियां शामिल करने के लिए आपने क्या किया?

जवाब : हमारे पास ज्यादातर पुराने लिखित ग्रंथ ऊंची जातियों के मर्दों ने लिखे हैं, किसी भी दूसरे पूर्व-आधुनिक भारतीय समुदाय की तुलना में कहीं ज्यादा. इसे संतुलित करने के लिए मैंने इन ग्रंथों को उल्टी नजर से पढ़ा, ताकि दबे-कुचले लोगों की दब गई आवाजें सामने आ सकें. इसके अलावा, मैंने औरतों और हाशिये के तबकों की कम मशहूर रचनाओं को ढूंढ-ढूंढ कर पढ़ा और उन्हें किताब में जगह दी – कई बार तो ऊंची जाति या हावी तबकों के ग्रंथों की जगह उन्हीं को तरजीह दी.

सवाल : आपकी किताब हाल के समय में हिंदू राष्ट्रवाद (हिंदुत्व) के उभार को भी शामिल करती है. आप इस घटना को उपमहाद्वीप के भविष्य को प्रभावित करते हुए कैसे देखती हैं?

जवाब : हिंदुत्व का इतिहास साफ है – इसकी जड़ें 1920 के दशक के फासीवादी आंदोलनों में हैं, और इसकी मौजूदा लोकप्रियता 1970 के दशक से बढ़ी. मुझे लगता है कि हिंदुत्व का आकर्षण भी उतना ही साफ है, चाहे कितना ही डरावना क्यों न हो – यह बहुसंख्यक को बाकियों से ज्यादा हक देने का वादा करता है. लेकिन हिंदुत्व का भविष्य तय नहीं है. एक बात पक्की है कि हिंदुत्व भी, बाकी सभी फासीवादी आंदोलनों की तरह, किसी न किसी वक्त बिखर जाएगा. असली सवाल यह है कि उसके बिखरने से पहले कितने भारतीयों को चोट पहुंचेगी.

सवाल : सिल्क रोड और अन्य व्यापारिक मार्गों ने उपमहाद्वीप के इतिहास को गढ़ने में बड़ी भूमिका निभाई. इन वैश्विक रिश्तों ने भारत के सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक विकास को कैसे प्रभावित किया?

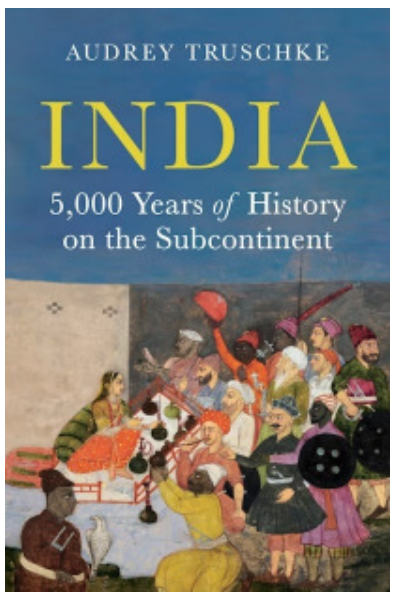

जवाब : आज का भारतीय उपमहाद्वीप हजारों सालों के व्यापक वैश्विक संबंधों और प्रवासों के बिना सोचा भी नहीं जा सकता. यहां उन चीजों की एक छोटी सूची है जो पुराने वैश्विक नेटवर्क से यहां पहुंचीं – मनुष्य, इंडो-यूरोपीय भाषाएं, ढेर सारा सोना, गेंदे के फूल, टमाटर, मिर्च, और कई धर्मों की खास परंपराएं (जिनमें हिंदू धर्म और इस्लाम शामिल हैं). भारतीय उपमहाद्वीप लंबे समय से सांस्कृतिक और भौतिक वस्तुओं का मजबूत निर्यातक भी रहा है.

सवाल : आप भारतीय इतिहास के बड़े ग्रंथों की अहमियत पर जोर देती हैं. आपको क्या लगता है कि ये आज के भारतीय समाज और संस्कृति को कैसे प्रभावित करते हैं?

जवाब : वेदों का आज के भारत पर, कुछ धार्मिक संदर्भों को छोड़कर, सीधा असर बहुत कम है. धुर-दक्षिणपंथी हिंदू राष्ट्रवादी वेदों का नाम तो लेते हैं, मगर ज्यादातर उनकी असल सामग्री से पूरी तरह अनजान रहते हैं. महाभारत अलग मामला है – यह राज्य द्वारा फैलाई जाने वाली हिंसा पर गहरी टिप्पणी करता है. मुझे लगता है यह आधुनिक टकरावों को समझने के लिए बिलकुल सटीक है, और यही वजह है कि लोग इस महाकाव्य को बार-बार अलग-अलग रूपों में सुनाते और पढ़ते हैं.

सवाल : आपको कैसे लगता है कि आपकी किताब भारतीय उपमहाद्वीप के जटिल इतिहास और दुनिया में उसकी जगह को गहराई से समझने में मदद कर सकती है?

जवाब : आजाद भारत में इतिहास पर खतरा मंडरा रहा है. भारतीय पाठकों के लिए मेरी उम्मीद है कि मेरी किताब भारत के विविध अतीत को ईमानदारी से सामने लाने वाली अकादमिक सच्चाई का सबूत बने. आजकल अतीत को लेकर कई राजनीतिक विवाद खड़े किए जा रहे हैं, मगर असल में वे आज के डर और बेचैनी के बारे में हैं. इसके उलट, मेरा मकसद है कि सचमुच जिज्ञासु लोग दक्षिण एशिया के समृद्ध अतीत को खुले मन से समझें.

सवाल : अकादमिक और लोकप्रिय इतिहासकारों के बीच अक्सर फासला देखा जाता है. क्या आपको लगता है कि यह जरूरी है?

जवाब : इतिहास बहुत बड़ा विषय है और इसमें हम सबके लिए जगह है. मुझे अच्छा लगता है कि लोकप्रिय इतिहासकारों ने लोगों में भारत के अतीत को लेकर दिलचस्पी जगाई है. लेकिन पेशेवर इतिहासकारों के पास वो हुनर और ट्रेनिंग होती है जो आम तौर पर लोकप्रिय इतिहासकारों के पास नहीं होती – जैसे इतिहास को समझने की विधियां, कारण-परिणाम की गहरी समझ, और मूल स्रोतों को उनकी असली भाषाओं में पढ़ने की क्षमता. ये बातें सिर्फ दिखावे की नहीं हैं, बल्कि इतिहास को पूरी तरह समझने की बुनियाद हैं. ■

('हिस्ट्री इज अंडर थ्रेट इन इंडिया': ऑड्रे ट्रशके, डेक्कन हेराल्ड, 28 सितंबर)

https://www.deccanherald.com/features/booksèkhistory-is-under-threat-in-india-author-audrey-truschke-374389

गांधी का जन्मदिन, आरएसएस का विजयादशमी और आरएसएस का हिसाब-किताब

पार्थ बनर्जी

अक्टूबर का महीना आते ही पूरी दुनिया मोहनदास करमचंद गांधी को याद करती है. वही गांधी जिन्हें हम बापू कहते हैं. अहिंसा और इंसाफ के रास्ते पर चलने वाले गांधी ने न सिर्फ भारत, बल्कि पूरी दुनिया पर असर डाला. दक्षिण अफ्रीका मार्टिन लूथर किंग जूनियर तक ने कहा कि उनकी लड़ाई में गांधी का रास्ता ही सबसे बड़ी सीख थी. गांधी ने साबित कर दिया कि सच्चाई और नैतिक साहस से बड़े से बड़ा साम्राज्य भी हिल सकता है.

लेकिन अक्टूबर सिर्फ गांधी का महीना नहीं है. यही महीना 1925 में आरएसएस की पैदाइश का भी है. उस वक्त जब देश के करोड़ों लोग अंग्रेजी हुकूमत से लड़ रहे थे, जेल जा रहे थे, जान दे रहे थे – आरएसएस दूर खड़ा था. न लड़ाई में, न कुर्बानी में. बल्कि इसके नेता हिटलर और मुसोलिनी जैसे यूरोपीय फासिस्टों से सीख रहे थे और एक 'हिंदू राष्ट्र' का ख्वाब देख रहे थे, जहां अल्पसंख्यक दूसरे दर्जे के नागरिक बन जाएं.

आरएसएस में मेरे साल

ये सब बातें मेरे लिए किताबों का इतिहास नहीं हैं. मैं खुद करीब बीस साल आरएसएस और उसकी शाखाओं भाजपा और एबीवीपी के साथ रहा. छोटे कार्यकर्ता से लेकर जिम्मेदार पदों तक पहुंचा. अनुशासन और मेहनत के लिए तारीफ भी मिली. मेरे पिता भी पुराने प्रचारक थे और वाजपेयी-अडवाणी जैसे नेताओं के करीबी. गांधी की हत्या के बाद जब आरएसएस पर थोड़े दिनों के लिए पाबंदी लगी थी तो वो जेल भी गए थे.

जवानी में मुझे लगता था कि मैं देश की सेवा कर रहा हूं. लेकिन धीरे-धीरे असली तस्वीर सामने आई. मुसलमानों, ईसाइयों, दलितों और सेक्युलर हिंदुओं को दुश्मन बताया जाता था. गांधी को 'कमजोर' कहकर मजाक उड़ाया जाता था. और नाथूराम गोडसे – जिसने गांधी को गोली मारी थी – उसकी चुपके से तारीफ की जाती थी.

तब मुझे समझ आया कि यह विचारधारा आजाद और बराबरी वाला भारत बनाने की नहीं है. यह तो सांप्रदायिक और तानाशाही सोच को फैलाने का प्रोजेक्ट है. चालीस साल पहले मैंने यह रास्ता छोड़ दिया. परिवार से रिश्ते बिगड़ने का दर्द भी झेला, लेकिन इस फैसले ने मुझे लोकतंत्र, इंसाफ और इंसानियत के लिए काम करने की आजादी दी.

गांधी का भारत बनाम आरएसएस का भारत

आज हालत ये है कि गांधी के कातिलों के वारिस सत्ता चला रहे हैं. भाजपा दरअसल आरएसएस का ही राजनीतिक चेहरा है. मोदी, शाह, गडकरी, राजनाथ – ये सब आजीवन संघी रहे हैं. उनकी नीतियां – मुसलमानों पर हमले, दलितों और ईसाइयों को निशाना बनाना, असहमति दबाना, इतिहास को तोड़-मरोड़ कर लिखना – ये सब कोई इत्तेफाक नहीं है. यह उसी विचारधारा का नतीजा है जो शुरू से भारत की बहुलता और लोकतांत्रिक आत्मा से नफरत करती रही.

आरएसएस ने कभी आजाद भारत के सपने को नहीं माना. इसके विचारक सावरकर खुलकर यूरोपीय फासिस्टों की तारीफ करते थे. गोलवलकर ने तो यहां तक कहा कि नाजी जर्मनी ने यहूदियों के साथ जो किया, वो एक 'मॉडल' है. उसी नफरत ने गांधी की जान ली.

मीडिया की चुप्पी और संलिप्तता

दिक्कत यह है कि आज का मीडिया इन सच्चाइयों को दबा देता है. अखबार और टीवी पर शायद ही कभी सुनने को मिलता है कि आरएसएस ने अंग्रेजों के खिलाफ कभी संघर्ष नहीं किया, कि यह तिरंगे का विरोध करता था, या इसके नेताओं को हिटलर-मुसोलिनी पसंद थे.

मुख्यधारा की बहसों में गांधी की हत्या को शायद ही कभी उस विचारधारा से जोड़ा जाता है जो आज सत्ता में बैठी है. इस चुप्पी से करोड़ों लोग यह मान बैठते हैं कि भाजपा बस एक और सामान्य पार्टी है, जबकि असलियत यह है कि यह एक सदी पुराने सांप्रदायिक फासीवादी आंदोलन का राजनीतिक मुखौटा है.

इस बार गांधी जयंती और विजयादशमी एक साथ पड़ रहे हैं. यह सिर्फ कैलेंडर का इत्तेफाक नहीं है, बल्कि एक प्रतीक है : गांधी बनाम उनके कातिल. सवाल साफ है – हम गांधी के अहिंसा और बराबरी वाले रास्ते पर चलेंगे या गोडसे के वारिसों को देश सौंप देंगे?

गांधी ने कहा था : 'भविष्य इस बात पर निर्भर करता है कि हम आज क्या करते हैं.' आज का भारत हमसे यही मांग कर रहा है कि हम सच का सामना करें. यह याद रखें कि किसने आजादी की लड़ाई लड़ी और कौन किनारे खड़ा रहा. और तय करें कि हमें कैसा भारत चाहिए – गांधी का समावेशी भारत, या आरएसएस का तानाशाही भारत.

(डॉ. पार्थ बनर्जी न्यूयॉर्क में रहने वाले कार्यकर्ता, शिक्षक और लेखक हैं. वे धर्म और मीडिया की वैश्विक राजनीति पर काम करते है.)

आरएसएस की सौवीं सालगिरह और आधुनिक भारत के सामने चुनौतियां

दीपंकर भट्टाचार्य

हर साल राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आरएसएस) विजयादशमी के दिन अपना स्थापना दिवस मनाता है. इस बार यह दिन 2 अक्टूबर को पड़ा – यानी वही तारीख जिसे भारत हमेशा गांधी जयंती के रूप में मनाता है, और संयोग से यही आरएसएस की सौवीं वर्षगांठ भी थी. यह अपने आप में आधुनिक भारत का एक बेहद बड़ा और अजीब विरोधाभास है – एक तरफ गांधी जी की विरासत का जश्न, जो दुनिया में भारत का सबसे मशहूर और सम्मानित चेहरा हैं, और दूसरी तरफ उस संगठन का महिमामंडन, जिस पर गांधी जी की हत्या में भूमिका के आरोप में कभी प्रतिबंध लगाया गया था. यह विरोधाभास इसलिए और भी तीखा हो जाता है क्योंकि तब और अब के भारतीय राज्य की भूमिका में जमीन-आसमान का फर्क आ चुका है.

फरवरी 1948 में, स्वतंत्र भारत के पहले गृह मंत्री सरदार पटेल ने महात्मा गांधी की हत्या के तुरंत बाद आरएसएस पर प्रतिबंध लगा दिया था. उन्होंने साफ कहा था कि 'हमें उन नफरत और हिंसा की ताकतों को जड़ से उखाड़ फेंकना होगा जो देश की आजादी के लिए खतरा हैं और उसकी अच्छी छवि को कलंकित करती हैं.' लेकिन 2025 में तस्वीर बिल्कुल उलट है. मोदी सरकार ने आरएसएस की सौवीं सालगिरह को एक सरकारी उत्सव में बदल दिया – खुद प्रधानमंत्री मोदी ने आगे बढ़कर पूरे तामझाम के साथ समारोहों का नेतृत्व किया, आरएसएस के नाम पर डाक टिकट और स्मारक सिक्का जारी किया, और सरकारी विभागों व संस्थाओं के जरिए उसकी तारीफ में आक्रामक प्रचार अभियान चलवाया.

नरेंद्र मोदी, जिन्होंने 2025 के स्वतंत्रता दिवस भाषण में आरएसएस को "दुनिया का सबसे बड़ा एनजीओ" बताया था, ने इस बार उसकी सौवीं सालगिरह के मंच को संगठन की खुलकर प्रशंसा करने के लिए इस्तेमाल किया. उन्होंने आरएसएस को भारत की "सनातन राष्ट्रीय चेतना" का आधुनिक रूप बताते हुए उसकी भरपूर तारीफ की.

मोदी ने आरएसएस को भारत के आजादी आंदोलन से जोड़ने की एक बेतुकी कोशिश भी की. उन्होंने यह तो जरूर बताया कि डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार कभी आजादी आंदोलन के दौरान जेल गए थे, लेकिन चालाकी से यह अहम बात नहीं बताया कि उनकी पहली गिरफ्तारी 1921-22 में हुई थी, जब वे कांग्रेस से जुड़े थे और आरएसएस की स्थापना भी नहीं हुई थी. 1930-31 में जब वे दोबारा जेल गए, तब उन्होंने साफ कहा था कि वे सत्याग्रह में अपनी व्यक्तिगत हैसियत से शामिल हैं, संगठन की ओर से नहीं. उसी दौर के दूसरे चर्चित हिंदुत्ववादी नेताओं में सावरकर अपने "माफीनामों" और गांधी हत्या की साजिश में कथित भूमिका के लिए बदनाम हैं, जबकि श्यामा प्रसाद मुखर्जी 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के साथ खुले तौर पर सहयोग कर रहे थे.

वाजपेयी के दौर में भी यह कोशिश की गई कि उन्हें 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन से जोड़कर उस दौर का तथाकथित 'नायक' दिखाया जाए. कहा गया कि उन्हें अपने पुश्तैनी गांव बटेश्वर (मध्य प्रदेश) से गिरफ्तार किया गया था और वे करीब बीस दिनों तक जेल में रहे. लेकिन जब यह खबरें सामने आने लगीं कि उन्होंने पुलिस से सहयोग किया

था, तब खुद वाजपेयी ने यह मानने से इनकार कर दिया कि उनका उस आंदोलन से कोई संबंध था. उन्होंने खुद को आंदोलन का सहभागी नहीं, बल्कि सिर्फ दर्शक बताया – बस भीड़ का हिस्सा. देश के हर हिस्से में आजादी आंदोलन का इतिहास यही दिखाता है कि आरएसएस उस आंदोलन से पूरी तरह अलग-थलग रहा. यह कोई संयोग नहीं, बल्कि आरएसएस की सोची-समझी नीति थी कि वह औपनिवेशिक शासन से किसी सीधी टकराव से बचे और अपनी सारी ताकत संगठन का ढांचा खड़ा करने और हिंदू वर्चस्ववादी विचारधारा फैलाने में लगाए. लेकिन आज, जब संघ परिवार सत्ता के शिखर पर बैठा है, वह इतिहास को फिर से लिखने में लगा है – ताकि हिंदुत्व को केंद्र में लाया जा सके और धर्मनिरपेक्ष राष्ट्रवाद को हाशिए पर धकेला जा सके.

इतिहास की लड़ाई जीतने की यह बेचैनी आरएसएस की उस लगातार कोशिश में भी साफ झलकती है, जिसमें वह नेहरू को अलग-थलग और बदनाम करने की कोशिश करता है, और बाकी ऐतिहासिक नेताओं को उनकी असली भूमिका से काटकर अपने मतलब के हिसाब से पेश करना चाहता है. गांधी और अंबेडकर इस संघी रणनीति के सबसे प्रमुख निशाने पर हैं. हाल के वर्षों में हमने देखा है कि किस तरह गांधी को "स्वच्छता" या "सफाई" के प्रतीक के रूप में बार-बार इस्तेमाल किया गया. अब जब ट्रंप की टैरिफ नीति ने भारत के विदेशी व्यापार को झटका दिया है, तो फिर से "गांधीवादी स्वदेशी" और "स्वावलंबन" की बातें उठाई जा रही हैं. यानी आत्मनिर्भरता का नारा गांधी के नाम पर उधार लिया जा रहा है. गांधी के भाषणों और प्रतीकों में हिंदू धार्मिक रूपकों का इस्तेमाल संघ के लिए उन्हें अपने मतलब का बनाना आसान बनाता है. लेकिन उनकी सबसे अहम बात, हिंदू-मुस्लिम एकता और साम्प्रदायिक सौहार्द को भारत की ताकत और राष्ट्रीय एकता की बुनियाद मानना, आज भी संघ की विचारधारा के लिए असहनीय और अस्वीकार्य है.

इतिहास की किसी और शख्सियत से ज्यादा, संघ डॉ. आंबेडकर की छवि को तोड़-मरोड़ कर पेश करने और उनकी बराबरी और इंसाफ की बात को कुंद करने में सबसे ज्यादा उतावला दिखता है. वह संविधान की लोकप्रियता और आंबेडकर के आकर्षण को अपने फासीवादी एजेंडे के लिए इस्तेमाल करना चाहता है. पूर्व राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद ने अपनी दलित पहचान और राष्ट्रपति पद की वैधता का इस्तेमाल करते हुए यह दावा किया कि आरएसएस "आंबेडकरवादी विचारधारा" के अनुरूप है. उन्होंने 2001 में वाजपेयी के एक भाषण का हवाला देते हुए कहा कि अब भारत की राह दिखाने वाली किताब मनुस्मृति नहीं, भीमस्मृति यानी संविधान होगी. यहां तक कि उन्होंने आरएसएस को "भीमवादी" या "आंबेडकरवादी संगठन" तक कह दिया. लेकिन यही डॉ. अंबेडकर जाति को भारत का सबसे बड़ा राष्ट्रविरोधी अवरोध मानते थे. उन्होंने जाति के उन्मूलन की जरूरत बताई थी और "हिंदू राज" की संभावना को भारत के लिए सबसे बड़ी संभावित आपदा कहा था. आज वही अंबेडकर संघी विचारकों के जरिए सामाजिक एकरूपता और प्रशासनिक केंद्रीकरण के पैरोकार के रूप में पेश किए जा रहे हैं.

संविधान में निहित सांस्कृतिक विविधता, संघीय ढांचे, अल्पसंख्यक अधिकारों और नागरिक स्वतंत्रताओं की गारंटियों को व्यवस्थित रूप से कमजोर और कई जगह उलटा जा रहा है. इसका मकसद संविधान के समतावादी नजरिए और लोकतंत्र की मूल भावना को नष्ट कर, उसे बहुसंख्यकवादी शासन, अंधराष्ट्रवाद, अत्यधिक केंद्रीकरण और आक्रामक निगरानी के औजार में बदल देना है. गांधी और अंबेडकर के नाम पर खोखली बातें और दिखावटी समर्थन, आजादी की लड़ाई के इतिहास को तोड़-मरोड़ कर लिखना, और संविधान की आत्मा को कुचलते हुए उसी के नाम पर उसका लगातार दुरुपयोग करना, यही आरएसएस की सौवीं सालगिरह पर संघ-भाजपा सत्ता तंत्र का सबसे खतरनाक कदम है.

वह संगठन जिसने संविधान को अपनाए जाने के वक्त ही उसे ठुकराया था, जिसने तिरंगे को अशुभ बताया था, और जिसने नफरत और हिंसा फैला कर गांधी की हत्या और अंबेडकर की बदनामी की जमीन तैयार की थी, वही आज भारत को अपनी विचारधारा के मुताबिक ढालने में जुटा है. शायद मोदी द्वारा हेडगेवार का यह कथन दोहराना – "लोगों को जैसा है वैसा स्वीकार करो, और फिर उन्हें वैसा बनाओ जैसा वे होने चाहिए" – इसी फासीवादी परियोजना की तरफ इशारा करता है.

अगर भारत को वाकई एक संप्रभु, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष और लोकतांत्रिक गणराज्य के रूप में अपने संवैधानिक सपने को साकार करना है, तो "हम भारत के लोग" को संविधान और आजादी के आंदोलन की उस क्रांतिकारी, समावेशी और परिवर्तनकारी विरासत को वापस हासिल कर, आगे बढ़ाना होगा. और इसके साथ, संघ को उसी हाशिए पर धकेलना होगा, जहां उसने अपने सौ सालों के अधिकांश वक्त में रहना पसंद किया था. ■

पूरा प्रतियोगी परीक्षा तंत्र ही संदेह के घेरे में है!

उत्तराखंड अधीनस्थ सेवा चयन आयोग द्वारा 5 अक्टूबर 2025 को आयोजित होने वाली सहकारी निरीक्षक वर्ग -2 / सहायक विकास अधिकारी (सहकारिता) की लिखित परीक्षा को स्थगित करने की सूचना 1 अक्टूबर को जारी की गयी. आयोग द्वारा जारी सूचना में – "इस परीक्षा में सम्मिलित होने अभ्यर्थियों के निवेदन/फीडबैक" को परीक्षा स्थगित करने का कारण के तौर पर दर्शाया गया!

21 सितंबर को उत्तराखंड अधीनस्थ सेवा चयन आयोग द्वारा अयोजित होने वाली स्नातक स्तरीय परीक्षा का पेपर लीक होने और उसके खिलाफ हुए युवाओं के आंदोलन के बाद ये पहली परीक्षा होनी थी. लेकिन परीक्षा आयोजन से चार दिन पहले "अभ्यर्थियों के निवेदन/फीडबैक" के बहाने के साथ, परीक्षा स्थगन, थोडा अटपटा लगा!

इसके दो दिन बाद यानि 3 अक्टूबर को एक व्यक्ति की गिरफ्तारी की सूचना आई. अखबारों में प्रकाशित ब्यौरे के अनुसार सुरेन्द्र कुमार नाम के उक्त व्यक्ति ने स्थगित की गयी परीक्षा के लिए तीन आवेदन पत्र भरे और तीनों में पिता के नाम की स्पेलिंग्स और मोबाइल नंबर अलग-अलग थे. अखबारों में प्रकाशित ब्यौरे के अनुसार उसने तीनों फार्मों में जन्मतिथि, हाईस्कूल से लेकर स्नातक की परीक्षा के अलग-अलग वर्ष भरे, फर्जी रोजगार पंजीकरण प्रमाण पत्र, फर्जी ओबीसी प्रमाण पत्र जमा किया. यह भी सामने आया कि उत्तर प्रदेश के हापुड़ जिले के पिलखुवा के रहने वाले उक्त आरोपी ने उत्तराखड का फर्जी स्थायी निवास प्रमाण पत्र भी आवेदन फॉर्म के साथ लगाया.

यह पूरी कहानी सुनने से लगता है कि पहले से सुनी-सुनाई कहानी पुनः दोहराई जा रही हो. याद कीजिये उत्तराखंड अधीनस्थ सेवा चयन आयोग द्वारा आयोजित 21 सितम्बर की स्नातक स्तरीय परीक्षा. इस परीक्षा में पेपर आध घंटे बाद हॉल से बाहर आ गया. शुरूआत में तो उत्तराखंड अधीनस्थ सेवा चयन आयोग के अध्यक्ष जी एस मर्तोलिया, प्राशसनिक अफसरों, भाजपा सरकार के मंत्री-विधायकों ने इसे पेपर लीक मानने से ही इंकार कर दिया था! बाद में युवाओं के आंदोलन के दबाव में मुख्यमंत्री को सीबीआई जांच की घोषणा करनी पड़ी.

इस परीक्षा में गड़बड़ी के मुख्य आरोपी खालिद मालिक के बारे में भी यही जानकारी सामने आई थी कि उसने चार अलग-अलग परीक्षा केन्द्रों से फॉर्म भरे थे. हालांकि खालिद के मामले में तो यह प्रश्न खड़ा होता ही है कि जब वह चार अलग-अलग फॉर्म भर रहा था तो उसे तभी क्यूं नहीं पकड़ा गया? वह हरिद्वार वाले परीक्षा केंद्र की रेकी करने गया, तब भी नहीं पकड़ा गया, परीक्षा के दिन भी पेपर बाहर भेजने में कामयाब रहा! उस परीक्षा केंद्र के मालिक पर तो अभी तक भी कोई कार्रवाई नहीं हुई है!

बहरहाल खालिद मालिक और सुरेन्द्र कुमार के मामले

(शेष अंतिम पृष्ठ पर)

पटना हाईकोर्ट का फैसला दुर्भाग्यपूर्ण

पटना 7 अक्टूबर 2025

भाकपा(माले) के पूर्व विधायक मनोज मंजिल सहित अन्य लोगों को पटना उच्च न्यायालय से राहत नहीं मिली और भोजपुर के बड़गांव मामले में जिला न्यायालय के फैसले के खिलाफ की गई अपील को खारिज करते हुए उच्च न्यायालय ने सजा बरकरार रद्दा है.

भाकपा(माले) राज्य सचिव कुणाल ने उच्च न्यायालय के इस फैसले को अफसोसनाक बताया है और कहा है 'न्याय के सवाल पर हमारी लड़ाई जारी रहेगी. हम सुप्रीम कोर्ट जाएंगे.'

उन्होंने यह भी कहा कि यह फैसला राजनीतिक दवाब में लिया गया प्रतीत होता है. जिस मामले में मनोज मंजिल और हमारे अन्य साथियों को सजा हुई थी, उसमें सबको गलत तरीके से फंसाया गया था. यहां तक कि जिस व्यक्ति की हत्या का आरोप इन लोगों पर है, उस व्यक्ति की लाश भी बरामद नहीं हुई थी, फिर भी सबको उम्र कैद की सजा दे दी गई थी.

भाकपा(माले) राज्य सचिव ने कहा कि बिहार व भोजपुर की जनता से अपील करते हैं कि गरीबों के नेताओं को साजिश के तहत सजा करने वाली ताकतों को आने वाले चुनाव में पुरजोर तरीके से सबक सिखाएं और न्याय का संघर्ष जारी रखें. ■

भारत-इस्राइल निवेश समझौता : जनसंहार के दौर में शर्मनाक साझेदारी

मनमोहन

8 सितम्बर 2025 को नई दिल्ली में मोदी सरकार ने इजरायल के फाइनेंस मिनिस्टर बेजलेल स्मोटरिच को बुलाकर भारत-इजरायल द्विपक्षीय निवेश समझौते पर दस्तखत करवाए. यह फैसला भारतीय विदेश नीति के इतिहास का सबसे अंधेरा और शर्मनाक मोड़ है. यह न सिर्फ फिलीस्तीनी जनता की आजादी की लड़ाई के साथ गद्दारी है बल्कि भारत की आजादी के उपनिवेश-विरोधी गौरवशाली विरासत के भी खिलाफ है.

भारत की आजादी की लड़ाई दुनिया भर के पीड़ित और गुलाम मजलूम कौमों के लिए उम्मीद का चिराग रही. यही वजह थी कि गांधी, नेहरू से लेकर इंदिरा और यहां तक कि वाजपेयी तक की सरकारों ने फिलीस्तीनी आजादी के सवाल पर अंतरराष्ट्रीय मंचों पर हमेशा इजरायल का विरोध किया और फिलीस्तीनी जनता के साथ खड़े होने की परंपरा निभाई. लेकिन आज वही भारत, जो गुटनिरपेक्ष आंदोलन का नेता माना जाता था, दुनिया के सबसे बड़े रंगभेदी और जनसंहारी राज्य इस्राइल से दोस्ती की नयी मिसाल पेश कर रहा है.

युद्ध अपराधी का स्वागतः नैतिक पतन की पराकाष्ठा

युद्ध अपराधी स्मोटरिच एक कट्टर दक्षिणपंथी चेहरा है, जिस पर जनसंहार भड़काने और बड़े पैमाने पर मानवाधिकारों के उल्लंघन के आरोप हैं. इसी वजह से ऑस्ट्रेलिया, कनाडा, न्यूजीलैंड, नॉर्वे और ब्रिटेन जैसे कई देशों ने उस पर पाबंदी लगा रखी है. अंतरराष्ट्रीय आपराधिक अदालत (आईसीसी) में उसके खिलाफ और इजरायल के नेशनल सिक्योरिटी मिनिस्टर इतामार बैन-गवीर के खिलाफ गिरफ्तारी वारंट की अर्जियां दी गई हैं. इससे पहले भी आईसीसी युद्ध अपराधी इजरायली नेताओं बेंजामिन नेतन्याहू और योआव गैलांट पर कार्रवाई शुरू की है. स्मोटरिच खुलेआम गाजा पर दोबारा कब्जा करने, जनसंहार, फिलीस्तीनी आबादी को घटाने और 'कब्जे' जैसे शब्द को सामान्य बनाने की बातें करता है. दरअसल, वह युद्ध अपराधों और गैरकानूनी बस्तियों को जायज ठहराने की कोशिश कर रहा है. उसकी पूरी सोच नस्ली वर्चस्व पर टिकी है, जो अंतरराष्ट्रीय कानून की खुली धज्जियां उड़ाती है.

इस समझौते की घोषणा ऐसे वक्त हुई है जब गाजा को कंसन्ट्रेशन कैंप जैसा बना दिया गया है और पिछले दो साल से ज्यादा समय से इजरायल वहां पर पूरी ताकत से जनसंहार चला रहा है. ट्रम्प के कथित गाजा पीस प्लान की छाया में फिलीस्तीनी जनता को सरेंडर करवाने और गाजा पर नया उपनिवेशी शासन थोपने की कोशिशें तेज हो रही हैं. अक्टूबर 2023 से अब तक इजरायल ने 64 हजार से ज्यादा फिलीस्तीनियों को मार डाला और डेढ़ लाख से ज्यादा को घायल किया है, जिनमें औरतें, बच्चे, पत्रकार, डॉक्टर और शिक्षक भी शामिल हैं. संयुक्त राष्ट्र की इंडिपेंडेंट इंटरनेशनल कमीशन ऑफ इन्क्वायरी ने 16 सितंबर 2025 की रिपोर्ट में स्पष्ट कहा कि इजरायल ने जनसंहार किया है और 1948 के जनसंहार कन्वेंशन की पांच में से चार शर्तें पूरी की हैं – सामूहिक हत्याएं, गंभीर शारीरिक व मानसिक नुकसान, ऐसी जिंदगी हालात थोपना जो समुदाय के विनाश की ओर ले जाएं, और जन्म रोकने के उपाय जैसे गाजा के सबसे बड़े रिप्रोडक्टिव क्लिनिक का नाश. बात सिर्फ बमबारी तक सीमित नहीं है; इस्राइल ने भूख को भी हथियार बना लिया है – खाना, दवा, ईंधन और पानी रोके गए हैं, लाखों लोग बेघर हैं और सैकड़ों बस्तियां तबाह हो चुकी हैं. अब तो इजरायली कैबिनेट ने नई यहूदी बस्तियां बनाने की मंजूरी भी दे दी है, यानी फिलीस्तीनियों की जमीन पर कब्जा और तेज किया जा रहा है. इजरायल का मकसद फलस्तीन की आबादी को मिटाना, उनकी जमीन छीनना और उनकी पहचान मिटाना है. फिर भी, मोदी सरकार इस जनसंहार पर चुप रही और संयुक्त राष्ट्र में इजरायल के युद्ध अपराधों की निंदा करने वाले हर प्रस्ताव पर अनुपस्थित रही. यह भारत के फिलीस्तीनी आत्मनिर्णय के ऐतिहासिक समर्थन से साफ भटकाव है.

स्मोटरिच का स्वागत करके और तेल अवीव के साथ रिश्ते गहरा करके मोदी ने दरअसल एक युद्ध अपराधी को गले लगाया है और एक रंगभेदी हुकूमत को मंजूरी दी है. एमनेस्टी इंटरनेशनल और ह्यूमन राइट्स वॉच ने इजरायल की रंगभेदी व्यवस्था का विस्तार से दस्तावेजीकरण किया है, जिसमें अलग-अलग बुनियादी ढांचे, संसाधनों से वंचित करना और कानूनी असमानताएं शामिल हैं. एमनेस्टी की 2022 की रिपोर्ट ने इसे "हुकूमत की एक क्रूर प्रणाली" कहा था, जबकि ह्यूमन राइट्स वॉच की 2021 की रिपोर्ट ने साफ कहा कि इजरायल रंगभेद और उत्पीड़न के अपराधों का दोषी है. इंटरनेशनल कोर्ट ऑफ जस्टिस (आईसीजे) भी इन उल्लंघनों के लिए इजरायल को जिम्मेदार ठहरा चुका है. मोदी सरकार का यह कदम सिर्फ शर्मनाक ही नहीं, बल्कि बेहद खतरनाक भी है, क्योंकि दुनिया भर में इजरायल पर पाबंदी और जवाबदेही की मांग तेज हो रही है. भारत की यह चुप्पी और मिलीभगत उसकी उस छवि को चोट पहुंचा रही है जो उसे ग्लोबल साउथ की अगुवाई और अरब दुनिया से दोस्ती की वजह से मिली थी.

कॉरपोरेट मुनाफे के लिए मानवता की बलि

यह निवेश समझौता भारत और इजरायल के बीच लंबे समय के आर्थिक रिश्तों की नींव रहता है, जिससे भारत इजरायल के अपराधों का और गहरा हिस्सेदार बन रहा है. पहले ही भारत हथियार बनाने और राजनीतिक समर्थन देने में उसका साझीदार रहा है, अब इस साझेदारी को व्यापारिक समझौतों के जरिए और पक्का किया जा रहा है. स्मोटरिच ने इस समझौते को "निवेशकों के लिए नए मौके, इस्राइली निर्यात मजबूत करने और कारोबारी वर्ग को भरोसा व संसाधन देने वाला कदम" बताया. भारतीय सरकार ने भी इसे "आर्थिक साझेदारी मजबूत करने और निवेश के लिए एक भरोसेमंद और मजबूत माहौल बनाने की साझा प्रतिबद्धता" कहा.

यह भारत का पहला ऐसा समझौता है जो किसी गैर-पश्चिमी या ओइसीडी सदस्य देश के साथ हुआ है, और इसे आगे चलकर मुक्त व्यापार समझौते (एफटीए) का रास्ता खोलने वाला कदम बताया जा रहा है. मगर सेंटर फॉर फाइनेंशियल अकाउंटेबिलिटी की 2025 की रिपोर्ट "प्रॉफिट - जेनोसाइड : इंडियन इनवेस्टमेंट इन इजरायल" साफ करती है कि भारतीय पूंजी – चाहे सरकारी हो या निजी – गैरकानूनी कब्जे और युद्ध अपराधों को फंडिंग में लगी हुई है. भारत के रक्षा, टेक्नोलॉजी और बुनियादी ढांचे में इजरायल के साथ निवेश 5.2 अरब डॉलर से ज्यादा पहुंच चुका है. उदाहरण के तौर पर अदानी ग्रुप ने इजरायली कंपनी एल्बिट सिस्टम्स के साथ मिलकर ड्रोन्स बनाने की फैक्ट्री लगाई है, जिन्हें गाजा में इस्तेमाल किया जा रहा है – यानी भारतीय मुनाफा सीधे-सीधे फिलीस्तीनी जनसंहार, दर्द और तबाही से जुड़ा हुआ है.

इस समझौते का असली मकसद कॉरपोरेट घरानों के हितों को बचाना है – खासकर अदानी का 2023 में हाइफा पोर्ट की 1.2 अरब डॉलर की खरीद – और साथ ही इंडिया-मिडिल ईस्ट कॉरिडोर को जिंदा करना, जो अमेरिका समर्थित आर्थिक योजना है और चीन की बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव के मुकाबले के लिए बनाई गई थी. गाजा जनसंहार की वजह से यह प्रोजेक्ट रुका हुआ है. अब इस समझौते के बाद इसे फिर से शुरू करने की कोशिश हो रही है, जिसमें इंसानी हकूक की जगह सीधे-सीधे मुनाफे को तवज्जो दी गई है. रिलायंस इंडस्ट्रीज और भारत इलेक्ट्रॉनिक्स लिमिटेड जैसी बड़ी कंपनियां भी इस साझेदारी को और गहरा कर रही हैं, टेक्नोलॉजी और हथियारों के सौदों के जरिए. CenFA ने इन सौदों की आलोचना करते हुए कहा कि यह सब "लोगों के ऊपर मुनाफे" की सोच पर टिका है, बिल्कुल उसी तरह जैसे उपनिवेशी दौर में संसाधनों की लूट होती थी.

ऐसे रिश्ते उस हथियारों की मंडी को जायज ठहराते हैं जिसे 'युद्ध में आजमाया' कहकर बेचा जाता है – यानी जो हथियार फिलीस्तीनियों पर आजमाए गए हैं, वही भारत में भी पहुंच रहे हैं. यह सिर्फ हथियार ही नहीं, बल्कि निगरानी और दमन की तकनीक भी है, जिसका इस्तेमाल भारत में जनता को काबू करने के लिए किया जा रहा है.

भारत की कंपनियां पानी और खेती तक में इजरायल के रंगभेदी ढांचे का हिस्सा बन चुकी हैं. जैन इरिगेशन और अदानी वेंचर्स जैसी कंपनियां इजरायल की राष्ट्रीय जल कंपनी मेकोरॉट के साथ जुड़ी हैं. यह वही कंपनी है जो वेस्ट बैंक के पानी पर कब्जा किए हुए है और उसका 80% हिस्सा यहूदी सेटलर्स (बसनेवालों) को देती है, जबकि फिलीस्तीनियों को पीने तक का साफ पानी नहीं मिलता. एमनेस्टी इंटरनेशनल ने इसे रंगभेद का हिस्सा बताया है, जिसमें पानी को हथियार बनाकर मानवीय संकट और गहरा किया जा रहा है. भारतीय कंपनियां बस्तियों के लिए सड़कें और पाइपलाइन जैसी बुनियादी ढांचागत परियोजनाओं में भी लगी हैं, जिनमें जमीन की जबरन जब्ती शामिल है. ह्यूमन राइट्स वॉच कहता है कि इस तरह की परियोजनाएं फिलीस्तीनियों के जबरन विस्थापन को बढ़ाती हैं और बसनेवालों को टिकाने के लिए जमीन पर कब्जे को मजबूत करती हैं. यह सब जेनेवा कन्वेंशन्स की खुली उल्लंघन है और अंतरराष्ट्रीय मानवीय कानून के हिसाब से भारत को भी कानूनी दायरे में ला सकता है.

वैचारिक गठजोड़ : हिंदुत्व-जायोनिज्म की साझेदारी

सियासी तौर पर देखें तो फिलीस्तीनी आजादी के समर्थन से इजरायल के साथ गहरे रिश्तों तक भारत का यह भटकाव, हिंदुत्व की सियासत के साथ वैचारिक मेल दिखाता है. आज दोनों देशों का द्विपक्षीय व्यापार अरबों डॉलर तक पहुंच चुका है, जो भारत के पाखंड को उजागर करता है. हिंदुत्व और जायोनिज्म दोनों ही जातीय राष्ट्रवाद (ethno&nationalism) और नस्लीय श्रेष्ठता पर आधारित विचारधाराएं हैं, जो इतिहास का गलत इस्तेमाल करके अपना दबदबा जायज ठहराती हैं – जायोनिज्म यहूदी जनता की होलोकास्ट की पीड़ा का हवाला देता है, और हिंदुत्व पुरानी आक्रमणों की कहानी सुनाकर मुस्लिम विरोध को हवा देता है. जायोनिज्म के ग्रेटर इजरायल की तरह आरएसएस/भाजपा अखंड भारत की साम्राज्यवादी बात करती है. यही मेल भारत को इजरायल का सबसे बड़ा हथियार खरीदार और नस्ली राष्ट्रवाद के प्रोजेक्ट्स का साझीदार बनाता है. भाजपा के दौर में भारत ने कानून और नीतियां अपनाई हैं जो इजरायल से मेल द्राती हैं – भारत के भीतर भी रंगभेदी ढांचे जैसे हालात बनाए जा रहे हैं, जिसकी मिसाल राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर (एनआरसी) है.

यह गठजोड़ सिर्फ व्यापार तक सीमित नहीं, बल्कि मजदूरों के शोषण और प्रोपेगेंडा तक फैला हुआ है. गाजा युद्ध के बाद इजरायल ने हजारों फिलीस्तीनी मजदूरों को निकाल दिया, और उस कमी को भारत ने पूरा किया – 2025 तक तकरीबन 20,000 भारतीय मजदूर इजरायल के निर्माण और देखभाल क्षेत्र में भेजे गए. मजदूर यूनियनों ने इसका विरोध किया, मगर मोदी सरकार ने इसे विदेश नीति की कामयाबी की तरह पेश किया.

कॉरपोरेट ताकतें भी इस रिश्ते को बढ़ावा दे रही हैं. मुकेश अंबानी का ऑब्जर्वर रिसर्च फाउंडेशन रायसीना डायलॉग जैसे मंचों पर भारत-इजरायल रिश्तों का प्रोपेगेंडा करता है. 2018 में इसी मंच से नेतन्याहू ने भारत-इजरायल रिश्तों की तारीफ की थी, जब भारत में एनसीआर और इजरायल में भेदभाव वाले कानून लागू किए जा रहे थे. भारतीय मीडिया भी इसमें हिस्सेदार है – एंकर कश्मीर को हमास से जोड़कर दिखाते हैं और कहते हैं कि भारत-इजरायल की लड़ाई "इस्लामी आतंकवाद" के खिलाफ साझा जंग है. वहीं भाजपा की आईटी सेल फिलीस्तीनियों के खिलाफ वही झूठ और नफरत फैलाती है, जैसी वह भारत में मुसलमानों के खिलाफ फैलाती है. यह पूरा प्रोपेगेंडा तंत्र इस गठजोड़ को बेचता है, युद्ध अपराधों पर पर्दा डालता है और युद्ध अपराधियों को "हीरो" बनाकर पेश करता है.

अंतरराष्ट्रीय कानून बिल्कुल साफ है : बस्तियों या कब्जे पर आधारित किसी भी प्रोजेक्ट को समर्थन देना पूरी तरह गैरकानूनी है. 1973 का संयुक्त राष्ट्र रंगभेद कन्वेंशन और अंतरराष्ट्रीय अपराध न्यायालय का रोम चार्टर रंगभेद को संगठित दमन और वर्चस्व की राजनीति के रूप में परिभाषित करते हैं.

संयुक्त राष्ट्र, एमनेस्टी और ह्यूमन राइट्स वॉच की रिपोर्टें स्पष्ट करती हैं कि इजरायल की नीतियां इसी ढांचे में आती हैं. भारत की पूंजी अब सीधे उन ढांचों में लग रही है जो कब्जे और युद्ध अपराधों को बनाए रखते हैं. CenFA की 2025 रिपोर्ट साफ कहती है कि भारतीय पूंजी "पूरी तरह उस वित्तीय ढांचे में लगी है जो कब्जे और युद्ध अपराधों को मजबूती देता है." यह सिर्फ कानून का सवाल नहीं है, बल्कि इंसानियत और नैतिक जिम्मेदारी का है – हर निवेश में नैतिक विकल्प चुनने का अवसर है, और गाजा के मामले में सही रास्ता बिल्कुल साफ है.

भारत को तुरंत दिशा बदलनी होगी ताकि अपनी नैतिक नेतृत्व की विरासत को बचा सके. इनमें फौरी कदमों में सैन्य और तकनीकी सहयोग खत्म करना, ऑक्यूपेशन और रंगभेद से जुड़ी वस्तुओं पर आर्थिक पाबंदी लगाना, संयुक्त राष्ट्र में वैश्विक पाबंदियों की वकालत करना और फिलीस्तीन की आजादी का समर्थन देना शामिल है. लंबे समय के लिए भारत को गजा और वेस्ट बैंक में मानवीय मदद पहुंचानी होगी; बहिष्कार, निवेश पर रोक और बीडीएस आंदोलन का समर्थन करना होगा और इजरायली सांस्कृतिक व शैक्षणिक संस्थानों का बहिष्कार करना होगा.

दरअसल यह केवल गाजा के लिए नहीं बल्कि पूरी इंसानियत की रूह के लिए है. आजाद भारत की नैतिक दिशा आजादी आंदोलन की विरासत से तय होती रही, और ऐसे गठजोड़ों को ठुकराया गया. गांधी ने फिलीस्तीन के बंटवारे का विरोध करते हुए कहा था कि यूरोप के अपराधों का बोझ फिलीस्तीनियों पर क्यों डाला जाए? 1947 में नेहरू ने अल्बर्ट आइंस्टीन की अपील के बावजूद यहूदी राज्य के विचार को अस्वीकार कर अरब जनता के हक को हिंसा-आधारित दावों पर तरजीह दी.

मगर आज का भारत, मोदी के दौर में, इस विरासत से गद्दारी करते हुए उन फासीवादी हुकूमतों से हाथ मिला रहा है जो एक-दूसरे की सत्ता को मजबूत करते हैं. मोदी-नेतन्याहू की साझेदारी दरअसल हिंदुत्व और जायोनिज्म का गठजोड़ है, जो भारतीय मजदूरों और डिजिटल ट्रोलों तक को इजरायल की सेवा में झोंककर वैश्विक दक्षिणपंथ को मजबूत कर रहा है. लेकिन जनसंहार और रंगभेदी कब्जे के खिलाफ दुनिया भर में जो आंदोलन खड़े हो रहे हैं, उनमें भारत की जनता भी शामिल है. यही आवाजें तय करेंगी कि इतिहास का पहिया किस दिशा में घूमेगा. जनसंहार के अंधेरे के पार इंसानियत और आजादी की रोशनी जरूर चमकेगी. ■

कल तक 370 को कोसने वाले लद्दाखी आज पछता रहे हैं

कभी शांति और प्राकृतिक सुंदरता के लिए पहचाने जाने वाला लद्दाख आज एक बड़े सामाजिक और राजनीतिक उथल-पुथल का गवाह बन रहा है.

लेह एपेक्स बॉडी यानी एबीएल के सह-अध्यक्ष और लद्दाख बौद्ध संघ यानी एलबीए के प्रमुख चेरिंग दोरजे लकरूक ने अनुच्छेद 370 के खात्मे को लद्दाख की मौजूदा स्थिति का एक बड़ा कारण बताया. उन्होंने कहा कि पहले लद्दाख के लोग अनुच्छेद 370 को बड़ी बाधा मानते थे, लेकिन अब पता चला कि वह अनुच्छेद तो उनकी जमीन और आजीविका की सुरक्षा की ढाल था.

चेरिंग दोरजे लकरूक ने ये बातें 'द इंडियन एक्सप्रेस' को दिए एक साक्षात्कार में कही हैं . लकरूक ने बताया कि 2019 में अनुच्छेद 370 के खात्मे और लद्दाख को केंद्र शासित प्रदेश बनाए जाने के बाद क्षेत्र की स्थिति बदल गई.

पहले वे अनुच्छेद 370 को केंद्र शासित प्रदेश की मांग में बाधा मानते थे, लेकिन अब उन्हें एहसास हुआ कि यह 70 साल तक उनकी जमीन और आजीविका की रक्षा करता रहा.

लकरूक ने कहा, 'अनुच्छेद 370 के रहते जम्मू-कश्मीर के लोग भी यहां जमीन नहीं खरीद सकते थे. अब पूरा भारत लद्दाख में जमीन खरीद रहा है. बड़े होटल चेन आ रहे हैं, जिससे स्थानीय लोगों की आजीविका छिन रही है.'

उन्होंने बताया कि केंद्र शासित प्रदेश बनने के बाद कोई नई नौकरियां सृजित नहीं हुईं. पहले जम्मू-कश्मीर सरकार के तहत भर्ती अभियान चलते थे, जिनमें स्थानीय युवाओं को नौकरी मिलती थी. अब ये अभियान बंद हो गए हैं.

जो नौकरियां मिल रही हैं, वे अनुबंध आधारित हैं, जिन्हें लकरूक ने 'गुलामी जैसा' करार दिया. उन्होंने कहा, 'ये युवा लंबे घंटे तक काम करने को मजबूर हैं और उन्हें अपमान सहना पड़ता है, क्योंकि उन्हें पता है कि उनकी नौकरी कभी भी जा सकती है.'

लकरूक के अनुसार, हाल ही में लेह में हुए हिंसक प्रदर्शन पूरी तरह से स्वत:स्फूर्त थे. अंग्रेजी अखबार की रिपोर्ट के अनुसार उन्होंने कहा कि करीब चार-पांच हजार लोग सड़कों पर उतरे, जिनमें ज्यादातर बेरोजगार युवा थे. उन्होंने कहा, 'ये सभी शिक्षित बेरोजगार युवा थे, जिन्हें अब 'Gen Z' कहा जाता है. हो सकता है कि भीड़ में कुछ असामाजिक तत्व शामिल हों, लेकिन मुख्य रूप से यह छह साल से दबी हुई कुंठा का परिणाम था.'

प्रदर्शनकारियों ने बीजेपी कार्यालय पर हमला किया, जहां उन्होंने बीजेपी के झंडों को फाड़ दिया, लेकिन तिरंगे को कोई नुकसान नहीं पहुंचाया. लकरूक ने इसे युवाओं की जागरूकता का सबूत बताया, जिन्होंने बाबासाहेब आंबेडकर और लामा जी की तस्वीरों को भी सुरक्षित निकालकर बिल्डिंग में आग लगाई.

एक जवाब में लकरूक ने नेपाल में हाल की क्रांति से प्रेरणा की संभावना को स्वीकार किया, क्योंकि आज हर युवा के हाथ में स्मार्टफोन है और वे विश्व की घटनाओं से अवगत हैं. लेकिन उन्होंने जोर देकर कहा कि मुख्य कारण स्थानीय बेरोजगारी और गरीबी है.

उन्होंने कहा, 'ये युवा गरीब परिवारों से हैं. जिन्हें हिरासत में लिया गया, वे होटल मालिकों या व्यापारियों के बच्चे नहीं हैं. ये वो लोग हैं, जिन्होंने बड़ी मुश्किल से पढ़ाई पूरी की, लेकिन उन्हें नौकरी नहीं मिली.'

लकरूक ने केंद्र शासित प्रदेश बनने के बाद प्रशासनिक बदलावों की आलोचना की. उन्होंने कहा कि सरकार ने पांच नए जिले बनाने की घोषणा तो की, लेकिन ये केवल

कागजों पर हैं. उन्होंने कहा, 'नए जिले बनाए गए, लेकिन न तो नए डिप्टी कमिश्नर नियुक्त किए गए, न ही वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक और न ही विभागीय प्रमुख. एक भी चपरासी की भर्ती नहीं हुई. लेह और कारगिल में केवल दो डिप्टी कमिश्नर हैं, बाकी जिले हवा में हैं.'

लद्दाख ऑटोनॉमस हिल डेवलपमेंट काउंसिल यानी एलएएचडीसी के पास पहले महत्वपूर्ण शक्तियां थीं, अब यह करीब-करीब निष्क्रिय हो चुकी है. परिषद के कर्मचारी अब केंद्र शासित प्रशासन के लिए काम कर रहे हैं और उनकी निष्ठा प्रशासन के प्रति है.

लकरूक ने महाराजा हरि सिंह के समय के ऐलान नंबर 38 जैसे पुराने कानूनों को रद्द करने की आलोचना की, जो बंजर जमीन को खेती के लिए पट्टे पर देने की अनुमति देता था. अब इस जमीन पर घर या होटल बनाने की अनुमति नहीं दी जा रही, जिससे स्थानीय लोगों को परेशानी हो रही है.

इसके अलावा, दो वन्यजीव अभयारण्यों के आसपास केवल दो कनाल जमीन पर गेस्ट हाउस बनाने की अनुमति है, जबकि बाकी जमीन बड़े निवेशकों के लिए खुली है. उन्होंने सवाल उठाया कि स्थानीय गेस्ट हाउस मालिक बड़े होटलों से कैसे मुकाबला करेंगे?

लद्दाख की लेह एपेक्स बॉडी और कारगिल डेमोक्रेटिक अलायंस यानी केडीए पिछले पांच साल से चार मुख्य मांगों के लिए आंदोलन कर रहे हैं –

1. पूर्ण राज्य का दर्जा देना
2. संविधान की छठी अनुसूची में शामिल करना
3. लेह और कारगिल के लिए अलग लोकसभा सीटें
4. मौजूदा सरकारी रिक्तियों को भरना.

लकरूक ने कहा कि सरकार के साथ छह साल की बातचीत के बाद भी केवल डोमिसाइल आधारित आरक्षण हासिल हुआ, वह भी 100% नहीं. उन्होंने कहा, 'हमारी मुख्य मांगों पर अभी तक चर्चा भी शुरू नहीं हुई. क्या इसके लिए और छह साल इंतजार करना होगा?'

लकरूक ने कहा कि छठी अनुसूची स्थानीय लोगों को सशक्त बनाती है और उनकी जमीन, जंगल और रीति-रिवाजों की रक्षा करती है.

पहले जम्मू-कश्मीर प्रशासन उनके स्थानीय मामलों में हस्तक्षेप नहीं करता था, लेकिन अब केंद्र शासित प्रशासन गांव के बुजुर्ग मुखियाओं को उम्र के आधार पर हटा रहा है, जो पारंपरिक रीति-रिवाजों को संभालते हैं. उन्होंने कहा कि यह बुजुर्ग ही हमारे रीति-रिवाजों को सबसे बेहतर जानते हैं.

लकरूक ने साफ किया कि लद्दाखवासियों ने कभी केवल केंद्र शासित प्रदेश की मांग नहीं की थी. उन्होंने कहा, 'हम हमेशा विधानमंडल के साथ केंद्र शासित प्रदेश चाहते थे. श्रीनगर दूर था, लेकिन दिल्ली उससे भी दूर है. अब केंद्र से आने वाला 90% फंड प्रशासन के पास जाता है, केवल 10% परिषद को मिलता है.' उन्होंने कहा कि विधानमंडल के बिना लद्दाख के लोग अपनी आवाज खो चुके हैं और उप-राज्यपाल, कमिश्नर और सचिव उनके 'शासक' बन गए हैं.

लकरूक ने सरकार से तत्काल बातचीत की मांग की और हिंसा की निंदा करते हुए कहा कि यह युवाओं की कुंठा का परिणाम थी. उन्होंने सोनम वांगचुक की हिरासत और उनके एनजीओ के एफसीआरए लाइसेंस रद्द करने की टाइमिंग पर भी सवाल उठाए.

उन्होंने कहा, '30 साल से उनका एनजीओ काम कर रहा है. अब अचानक कार्रवाई क्यों?' उन्होंने पुलिस की गोलीबारी की भी आलोचना की, जिसमें चार लोगों की मौत हुई और कई घायल हुए. लकरूक ने चेतावनी दी कि अगर सरकार ने जल्द ही मांगों पर ध्यान नहीं दिया, तो स्थिति और बिगड़ सकती है. ■

पंजाब में प्रवासियों को भागने के खिलाफ भाकपा(माले) का अभियान

पुरुषोत्तम शर्मा

प्रवासी मजदूरों पर हो रहे हमलों और उन्हें पंजाब से भगाने की कार्यवाहियों पर तत्काल रोक लगाने, मनरेगा योजना के तहत रोजगार देने और बाढ़ की तबाही से हुए नुकसान का मुआवजा देने की मांग पर पंजाब में भाकपा(माले) से जुड़े मजदूर मुक्ति मोर्चा ने 29 सितम्बर 2025 को प्रदेश के कई जिला मुख्यालयों पर जोरदार धरना-प्रदर्शन किए. मानसा, गुरदासपुर, संगरूर और अमृतसर में बड़ी संख्या में मजदूरों ने इन धरना प्रदर्शनों में हिस्सा लेकर अपनी मांगों से संबंधित ज्ञापन सौंपे. कई अन्य जिलों से भी मजदूर मुक्ति मोर्चा कार्यकर्ताओं ने ज्ञापन भेजे.

पंजाब के होशियारपुर जिले में एक प्रवासी अपराधी द्वारा 6 वर्ष के बच्चे के साथ किए गए अमानवीय कृत्य व हत्या से पूरे पंजाब में कानून व्यवस्था को लेकर लोगों में गुस्से कई लहर फैल गई थी. यह पहले से ही राज्य में बढ़ते अपराधों और नशे के कारोबार को रोकने में विफल पंजाब सरकार के प्रति लोगों में जमे गुस्से का ही विस्फोट था. पर विभाजनकारी राजनीति का खेल खेलने वाली कुछ ताकतों ने इस मौके को अपनी विभाजनकारी राजनीति को आगे बढ़ाने के रूप में इस्तेमाल कर 'प्रवासी भगाओ' अभियान में तब्दील कर दिया. हालांकि मानवता की सेवा और रक्षा की दसों गुरुओं की सीख वाले पंजाब ने अपने स्वभाव के अनुरूप ऐसे तत्वों की विभाजनकारी राजनीति को नकार दिया और खुलकर प्रवासी मजदूरों का साथ दिया. तबकि वे ताकतें इस अभियान को परवान चढ़ाने की कोशिशों में लगी रहीं.

ऐसी स्थिति में भाकपा(माले) ने ऐसी विभाजनकारी ताकतों को जवाब देने और किसान-मजदूर एकता के बल पर सरकार की नाकामयाबी के खिलाफ संघर्ष खड़ा करने का निर्णय लिया. भाकपा(माले) के महासचिव का. दीपंकर भट्टाचार्य ने अपने 7 और 22 सितम्बर के चंडीगढ़ दौरों में इस मुद्दे को प्रमुखता से उठाया और इन विभाजनकारी ताकतों के खिलाफ मजदूर-किसान एकता का आह्वान किया. पार्टी के मजदूर संगठन मजदूर मुक्ति मोर्चा ने 29 सितम्बर को इसी अभियान के तहत कार्यक्रम आयोजित किए. पंजाब में संयुक्त किसान मोर्चा ने भी 'प्रवासी भगाओ अभियान' की निंदा कर इसे रोकने की मांग करते हुए 8 अक्टूबर को इस मांग सहित अपनी अन्य मांगों पर पंजाब के सभी जिला मुख्यालयों में प्रदर्शन करने की घेषणा की है.

पंजाब में पिछले छः माह से मनरेगा का काम लगभग बंद होने से ग्रामीण मजदूरों के सामने रोजी-रोटी का संकट खड़ा हो गया है. कई क्षेत्रों में पिछले काम का भुगतान अभी तक नहीं हुआ है. इधर बाढ़ की तबाही से नष्ट हुई फसलों के कारण खेती के मौसम में उनके रोजगार पर भी बड़ा असर हुआ है. मजदूर मनरेगा में काम की मांग कर रहे हैं. राज्य सरकार केंद्र द्वारा बजट जारी न करने के कारण असमर्थता जता रही है, जबकि केंद्र सरकार ने इस वत्तीय वर्ष 2025-26 के लिए मनरेगा के बजट में 40 प्रतिशत की कटौती कर दी है.

केंद्र की मोदी सरकार कह रही है कि उसने गांवों का इतना विकास कर दिया है कि अब गांवों से मनरेगा में रोजगार की मांग कम हो गई है. जबकि हकीकत यह है कि मनरेगा में मजदूरी की दर बहुत ही निम्न और अमानवीय है. इसके बावजूद, मजदूर पूरे देश में 200 दिन के काम की गारंटी की मांग कर रहे हैं और सरकार वर्ष में 40 दिन का औसत रोजगार भी मुहैय्या नहीं करा पा रही है.

प्रदर्शनकारियों ने इसके साथ ही पंजाब में बाढ़ से आई भयानक तबाही से पंजाब के प्रभावित किसानों, मजदूरों, व्यापारियों व अन्य तबको को हुए नुकसान की भरपाई की मांग की. सरकार द्वारा तबाही से हुई क्षति पूर्ति और तात्कालिक सहायता न देने और केंद्र सरकार द्वारा राज्य को हुए बीस हजार करोड़ के नुकसान के बदले मात्र 16 सौ करोड़ रुपए सहायता करने की भी निंदा की और जल्द ही पंजाब को 20 हजार करोड़ रुपए जारी करने, सभी प्रभावित मजदूरों को तत्काल 20 हजार रुपए की सहायता देने, किसानों को 70 हजार रुपए प्रति एकड़ व एक लाख रूपया प्रति जानवर तथा पूरी तरह ध्वस्त मकानों के लिए 10 लाख रूपये व ज्यादा नुकसान हुए मकानों के लिए 5 लाख रुपये की क्षतिपूर्ति के तत्काल भुगतान की मांग की है. ■

उत्तराखंड का काशीपुर

पुलिस कहां से लाती है ऐसी सांप्रदायिक नफरत!

केके बोरा

भाकपा(माले) राज्य कमेटी सदस्य कॉमरेड केके बोरा ने उत्तराखंड के ऊधमसिंह नगर जिले के काशीपुर के अल्ली खां मोहल्ले का दौरा किया और आम लोगों से मुलाकात कर खैरियत जानी. ये इलाका उस समय सुर्खियों में आ गया था जब 'आई लव मोहम्मद' के बैनर के साथ जलूस निकाल रहे मोहल्ले के युवकों को पुलिस ने लाठी चार्ज कर संगीन धाराओं में मुकदमे दर्ज कर लिए.

21सितंबर 2025 को निकला यह जलूस 19 सितंबर के एक ऐसे ही जलूस के बाद निकाला गया था. 19 तारीख को यह जलूस अल्ली खां मोहल्ले में शांतिपूर्ण संपन्न हुआ था. 21सितंबर का जलूस पुलिस के रोके जाने के बाद 7 व्यक्तियों की गिरफ्तारी हुई. हालांकि पुलिस का कहना है कि लाठी चार्ज पुलिस वाहन 112 के शीशे पर हुए हमले के बाद और कुछ पुलिस कर्मियों के साथ मारपीट के बाद किया गया.

लेकिन जिस तरीके पुलिस ने घटना के बाद धरपकड़ और मुस्लिमों को सामूहिक रूप से दंडित करने का व्यवहार दिखााया वह आदर्श पुलिस मेन्युअल के विपरीत साम्प्रदायिक चरित्र को दिखाता है. बगैर किसी आदेश व पूर्व सूचना नोटिस के अभाव में नगर निगम के बुलडोजर से मोहल्ले की मुस्लिम दुकानों के आगे नाली के ऊपर के फूट स्टेप्स को तोड़ा गया. कई जगहों पर बल प्रयोग के दवाब में पुराने बिजली के मीटरों की जगह विवादास्पद अडानी के स्मार्ट मीटर लगवाए गए.

पुलिस ने सुप्रीम कोर्ट की गाइडलाइन्स के विरुद्ध गिरफ्तारियों को अमानवीय तौर से किया तथा सबक सिखाने वाले अंदाज से गिरफ्तारियों के वीडियो बनाए और सोशल मीडिया में प्रचारित-प्रसारित किए.

पुलिस ने दर्ज एफआईआर और प्रेस बयानों में कहा कि बिना अनुमति के निकाले गए जलूस को रोका गया. लेकिन पुलिस यह नहीं बताती कि शहर में निषेधाज्ञा लागू नहीं थी ऐसे में शांतिपूर्ण जलूस हेतु अनुमति की दरकार कानूनन जरूरी नहीं होती. स्पष्ट है कि शांतिपूर्ण जलूस पर बल प्रयोग कर रुकावट की कार्यवाही पुलिस द्वारा की गई जो कि अनावश्यक था. पुलिस ने 3 नामजद समेत 400-500 अज्ञात का मुकदमा दर्ज किया है. घटना के बाद पुलिस द्वारा सत्यापन के नाम पर घर-घर तलाशियों और छापेमारी के चलते न केवल इस मोहल्ले बल्कि पूरे शहर भर में मुस्लिम समाज में भय व्याप्त हो गया.

इस मामले में पुलिस के द्वारा इतनी बड़ी संख्या में लोगों को उपद्रवी बताना निर्दोषों के दमन की संभावना को पुख्ता कर देता है. जबकि जलूस पुलिस की गैर जिम्मेदारी से ही बवाल के रूप में सामने लाया गया है. ये एक तरह से पुलिस द्वारा जान-बुझ कर (फेब्रीकेशन कर) अपराध प्रदर्शित करने का तरीका है.

अभी तक 33 लोगों की गिरफ्तारी हुई है जिनमें 13 नाबालिग शामिल हैं. पुलिस का पूछताछ के नाम पर पकड़ना और डराए जाने का व्यवहार नौजवानों-बच्चों को निशाना बना रहा है.

आज भी मोहल्ले में मुख्य चौराहे पर पुलिस की मौजूदगी है. जबकि मोहल्ले के शुरू होते ही ठीक पूरब दिशा में बांसफोड़ान पुलिस चौकी वर्षों से कायम है. मोहल्ले का पश्चिमी सिरा किला मोहल्ले और पूरबी सिरा महेशपुरा मोहल्ले से जुड़ा है. उक्त दोनों ही मोहल्ले सघन व मिश्रित (हिंदू-मुस्लिम आबादी के है. किसी भी मोहल्ले में आज भी पहले की तरह कोई सांप्रदायिक विद्वेष नहीं है. लेकिन जिस तरह से बुलडोजर की कार्यवाही सिर्फ अल्ली खां मोहल्ले में हुई है, वह जरूर पुलिस के सांप्रदायिक व्यवहार पर प्रश्न खड़ा कर देती है.

जिलाधिकारी ने 24 सितम्बर को मोहल्ले का दौरा किया लेकिन उन्होंने भी पुलिस के बुरे बर्ताव को कानून विरुद्ध नहीं माना, उल्टे उन्होंने अल्ली खां व आस पास के मोहल्लों में हाउस टैक्स, दुकानों के लाइसेंस जांच के साथ ही क्षेत्र में रह रहे लोगों का सत्यापन करने, वोटर लिस्ट सत्यापन, विद्युत संयोजनों, पेयजल संयोजनों व राशन कार्डों का शत प्रतिशत सत्यापन करने के निर्देश दिए जो कि इस माहौल में गैर जरूरी है और यह भी मुस्लिम आबादी पर मलहम लगाने के बजाय नए तरीकों से हैरान-परेशान करने व अनावश्यक दबाव बढ़ा कर सरकार की नफरती नीति को सामने लाने की ही कार्यवाही है.

21 सितंबर के बाद से अल्ली खां की अधिकांश दुकानें प्रशासन की कार्रवाई से बंद थीं जो कि हफ्ते भर बाद से खुलनी शुरू हुई हैं. करीब 70 के लगभग ठेले भी हटवाए थे. जो कि अभी तक भी वापस लगने शुरू नहीं हो सके हैं

इन छोटे गरीब दुकानदारों को भय है कि दुकान लाइसेंस के नाम पर या सत्यापन करने के बहाने उनके विरुद्ध कोई कार्यवाही की जा सकती है. गौरतलब है कि दुकान का लाइसेंस पंजीयन की कानूनी विधि को उत्तराखण्ड सरकार पूर्व में में ही शून्य कर चुकी है. ऐसे में श्रम विभाग में बनने वाला दुकान पंजीयन बंद है.

इतना जुल्म झेलने व देखने के बाद भी मोहल्ले वासी खुलकर बोलने से हिचकते है. वे समझते हैं कि देश में मोदी सरकार के काल में मुस्लिमों के साथ दमन-उत्पीड़न एक आम व्यवहार हो चुका है.

पेपर लीक आंदोलन की तासीर से घबराई राज्य सरकार के लिए अल्ली खां मोहल्ला की इस घटना को यहां के बाशिंदों के बीच नफरत-बंटवारा के लिए एक मौका बनाए जाने की पुरजोर कोशिश के बतौर देख जा रहा है. इसमें पुलिस को मोहरा बना कर सरकार के सांप्रदायिक एजेंडे को लागू करने की भी एक कोशिश दिखती है, मगर मुस्लिम दमन की तमाम वीडियो के वायरल कर मुस्लिम विरोधी आम माहौल के फैलाने की पुरजोर कोशिशों के बावजूद काशीपुर नगर की जनता ने इसमें शामिल होने से इनकार कर दिया. अल्ली खां मोहल्ला पुलिस दमन का एक नया पन्ना बन गया.

1. भाकपा (माले) 21सितंबर 2025 की अल्ली खां मोहल्ले में हुए इस प्रकरण में पुलिस की संदेहास्पद संप्रदायिक भूमिका की जांच के लिए उच्च स्तरीय न्यायिक जांच आयोग के गठन की मांग करता है.

2. भाकपा(माले) सभी निर्दोष बच्चों-नौजवानों की तत्काल रिहाई और मोहल्ले में अनावश्यक दबाव, दबिश ओर मुस्लिम आबादी को भयाक्रांत करने की सांप्रदायिक पुलिस व प्रशासनिक (नगर निगम व विद्युत विभाग की) कोशिशों पर तत्काल रोक लगाने की मांग करती है.

3. भाकपा(माले) की मांग है कि राज्य की धामी सरकार काशीपुर क्षेत्र के मुस्लिमों के साथ भयादोहन की नीति छोड़ नागरिक अधिकारों की बहाली की गारंटी करे. ■

गाजा पट्टी में जारी नरसंहार के खिलाफ कन्वेंशन और विरोध प्रदर्शन

गाजा पट्टी पर इजरायली हमला शुरू होने के दो साल पूरे होने के अवसर पर पंजाब में पांच वामपंथी पार्टियों के 'फासीवादी हमला विरोधी फ्रंट: पंजाब' के आह्वान पर दो विशाल क्षेत्रीय कन्वेंशन आयोजित हुए. यह मोर्चा सीपीआई (एमएल) लिबरेशन, सीपीआई, आरएमपीआई, सीपीआई (एमएल) एनडी और इंकलाबी केंद्र, पंजाब पर आधारित है.

इन कन्वेंशनों में इन हमलों को तुरंत बंद किए जाने की मांग करते हुए इजरायल-अमेरिकी गठजोड़ के खिलाफ विरोध प्रदर्शन किए गए. माझा-दोआबा क्षेत्र का कन्वेंशन 6 अक्टूबर 2025 को जालंधर में और मालवा क्षेत्र का कन्वेंशन 7 अक्टूबर 2025 को बरनाला में आयोजित किया गया. इन कन्वेंशनों और प्रदर्शनों में सैकड़ों किसानों, मजदूरों, युवाओं और महिलाओं ने शिरकत की. जालंधर में यह कन्वेंशन देश भगत यादगार हॉल और बरनाला में शक्ति कला मंदिर हॉल में आयोजित किया गया.

इन कन्वेंशनों को शामिल वामपंथी पार्टियों के केंद्रीय और सूबाई नेताओं – कॉमरेड गुरमीत सिंह बख्तपुर, सुखदर्शन

सिंह नत्त, राजविंदर सिंह राणा, गोबिंद सिंह छाजली, मंगत राम पासला, प्रो. जयपाल सिंह, महीपाल सिंह, बंत सिंह बराड़, निर्मल सिंह धालीवाल, अजमेर सिंह, कुलविंदर सिंह वड़ैच, कंवलजीत खन्ना, नारायण दत्त और किरणजीत सिंह सेखों – द्वारा संबोधित किया गया.

वक्ताओं ने अपने संबोधन के दौरान कहा कि अमेरिका और नाटो गुट की मदद और छत्रछाया के तहत नस्लवादी इजरायल पिछले सात दशकों से फिलिस्तीनी लोगों का उजाड़ता और नरसंहार करता आ रहा है. इजरायल ने पिछले दो वर्षों से गाजा पट्टी पर लगातार हमलों और बमबारी के माध्यम से भयानक तबाही मचायी है और अब तक 67 हजार से अधिक लोगों का कत्ल कर चुका है. यह संसार भर के अमनपसंद व मानवतावादी लोगों के लिए बहुत बड़ी चुनौती है. मरने वालों में अधिकतर मासूम बच्चे, महिलाएं और बुजुर्ग शामिल हैं. इनके अलावा इनमें सैकड़ों डॉक्टर और पत्रकार भी शामिल हैं. गाजा पट्टी में बस्तियां, स्कूल, कॉलेज, यूनिवर्सिटियां और अस्पतालों को ढहा कर मलबे में बदल दिया गया है. इजरायल को हथियार सप्लाई करने में भी अमेरिका और नाटो गुट सबसे आगे हैं. घर से बेघर हुए, उजड़ चुके और भूख-प्यास से पीड़ित बेकसूर फिलिस्तीनी लोग जख्मों और भूख की ताव न झेल पाने की वजह से तड़प-तड़प कर मर रहे हैं. हजारों फिलिस्तीनी बच्चे, बुजुर्ग, महिलाएं और युवा पुरुष पड़ोसी देशों में हिजरत करने के लिए मजबूर हैं. बहुसंख्यक फिलिस्तीनी ऐसे हैं, जो पैसे की कमी के कारण पड़ोसी देशों में पलायन भी नहीं कर सकते. अमेरिकी साम्राज्य अरब देशों के तेल भंडारों पर अपना दबदबा और जकड़ बरकरार रखने तथा चीन की चुनौती का सामना करने के लिए बड़ी बेशर्मी से इजरायल को अपनी एक फौजी चौकी के रूप में इस्तेमाल कर रहा है. उसकी सरपरस्ती के तहत ही नेतन्याहू सरकार इस घिनौने कत्लेआम को अंजाम दे रही है. साम्राजी शक्तियों के लिए सिर्फ अपना मुनाफा ही सब कुछ है. उनके लिए बच्चों-बुजुर्गों की भूख या बिना इलाज तड़प-तड़प कर मर जाना कोई मायने नहीं रखता है.

वक्ताओं ने अमेरिका के राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप द्वारा शांति के लिए रखे बीस सूत्रीय कार्यक्रम को रद्द करते हुए कहा कि दुनिया का यह दरिंदा इस गंभीर मानवीय संकट का लाभ उठा कर फिलिस्तीन को अपनी बस्ती बनाना चाहता है. वक्ताओं द्वारा यह मांग जोर से उठाई गई कि भारत सरकार, नस्लवादी इजरायल से सभी राजनयिक और व्यापारिक संबंध पूर्ण रूप से खत्म करे.

इन कन्वेंशनों द्वारा गाजा से इजरायली फौजों को तुरंत निकालने, एक आजाद और प्रभुसत्ता संपन्न फिलिस्तीन स्थापित करने, इजरायल द्वारा गाजा के लिए राहत ले कर आ रहे ग्लोबल समुद फ्लोटिला मुहिम के मानवीय कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार करने की सख्त निंदा करते हुए उन्हें तुरंत रिहा करने, इजरायल द्वारा की गई फिलिस्तीन की नाकाबंदी पूरी तरह खत्म करने तथा फिलिस्तीनी लोगों पर लगाई गई पाबंदियां हटाने, फिलिस्तीनियों को खाद्य सामग्री पहुंचाने पर से हर रोक खत्म करने के प्रस्ताव पारित हुए.

इसके साथ ही, मध्य भारत के सूबों में आदिवासियों और माओवादियों के झूठे मुकाबले बंद करने, कॉरपोरेट घरानों को जल, जंगल और जमीन लूटने की दी गई खुली छूट खत्म करने, भारी बाढ़ों से हुए पंजाब में लोगों के भारी नुकसान की फौरी तौर पर पूर्ति करने, कम से कम 70000/- रुपये प्रति एकड़ मुआवजा देने, बाढ़ों के कारण मजदूरों के घरों, पशुओं और रोजगार के हुए नुकसान की पूर्ति करने, बाढ़ों के कारण लोगों के अक्सर होने वाले नुकसान की रोकथाम के लिए नदियों के दोनों ओर मजबूत बांध बनाए जाने, बाढ़ों के कारणों की जांच करने के लिए एक ज्यूडिशियल कमीशन बनाने, लद्दाख को पूर्ण राज्य का दर्जा देने तथा संविधान की छठी अनुसूची में शामिल करने, सोनम वांगचुक को तुरंत रिहा करने, बिहार से बाद पंजाब समेत पूरे देश में एसआईआर (स्पेशल वोट संशोधन) की वोट चोर मुहिम को बंद करने, अपनी सजाएं भुगत चुके और बिना केस चलाए जेल में बंद सभी राजनीतिक बंदियों को रिहा करने की जोरदार मांग करते कुछ अहम प्रस्ताव भी पारित किए गए.

– सुखदर्शन सिंह नत्त

भाकपा(माले) महासचिव का. दीपंकर भट्टाचार्य ने पिछले दिनों दरौली, अरवल तथा घोषी में पार्टी विधायकों क्रमशः का. सत्यदेव राम, का. महानंद सिंह और का. रामबलि सिंह यादव के 5 वर्षों के संसदीय प्रदर्शन का 'रिपोर्ट कार्ड' जारी किया और वारिसनगर (समस्तीपुर) में कार्यकर्ता कन्वेंशन को भी संबोधित किया.

SAMKALEEN LOKYUDDH
समकालीन लोकयुद्ध, खंड - 34, अंक 30-31, 4 - 17 अक्टूबर 2025
R.N.I. NO.52394/91
Registered by SSPOs
REGD. P.T.16/2006
VALID UPTO 2026
पोस्टेज का दिन : सोमवार

वितरित न हो तो कृपया इस पते पर वापस भेजें :
समकालीन लोकयुद्ध
चंद्रशेखर स्मृति भवन, जगतनारायण रोड
पटना – 800 003

प्रति
— — — — — — — — — — — — —
— — — — — — — — — — — — —
— — — — — — — — — — — — —
— — — — — — — — — — — — —

पीरपैंती का सच : 1 रुपये में अडानी को सौंपा गया किसानों का खून-पसीना

दीपंकर भट्टाचार्य

कल पीरपैंती की हमारी यात्रा ने हमें यह साफ दिखा दिया है कि प्रस्तावित अडानी पावर प्लांट की कीमत पीरपैंती के प्रभावित लोगों और इलाके के लिए कितनी भारी है.

यह जमीन बिहार सरकार ने लगभग दस साल पहले जबरन ले ली थी, स्थानीय लोगों के विरोध को पूरी तरह नजरअंदाज करते हुए. यह हैरान करने वाला है कि सरकार ने लोगों के प्लांट के वैकल्पिक स्थल के प्रस्ताव पर कोई ध्यान नहीं दिया, जिससे कोई विस्थापन नहीं होता और बहुत कम तबाही होती. पटना हाई कोर्ट ने भी लोगों की रिट याचिका यह कहकर खारिज कर दी कि "अधिग्रहण के लिए स्थल राज्य तय करता है और प्रभावित लोग वैकल्पिक स्थल चुनने के लिए सरकार को बाध्य नहीं कर सकते." यह फैसला 10 अक्तूबर 2017 को आया, जबकि 2013 के भूमि अधिग्रहण कानून ने जमीन खोने वालों की सहमति को जरूरी ठहराया था.

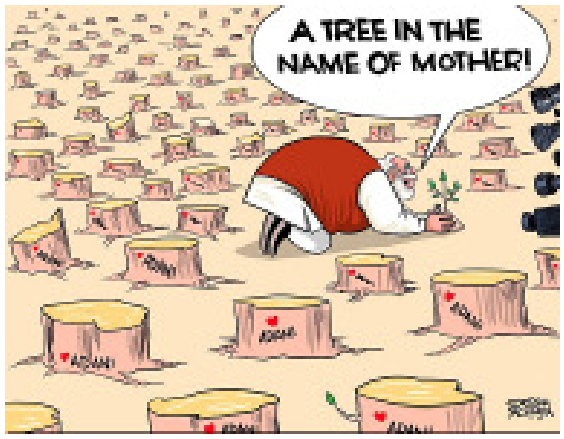

जमीन खोने वालों को दिया गया मुआवजा न केवल बिल्कुल अपर्याप्त है, बल्कि एक जैसी जमीन होने के बावजूद अलग-अलग व्यक्तियों को अलग-अलग दरों का मुआवजा मिला है. यह इलाका आम और दूसरे पेड़ों से भरा हुआ है और नुकसान और मुआवजे की गणना करते समय इन पेड़ों के मूल्य को शामिल नहीं किया गया है. 2013 का कानून रोजी-रोटी खोने वालों को भी मुआवजा देता है और यह भी कहता है कि अगर अधिग्रहण के बाद पांच साल तक जमीन बेकार पड़ी रहे तो उसे मालिकों को वापस करना होगा. पीरपैंती में इन दोनों बातों की साफ उल्लंघन हुआ है.

अधिग्रहण के समय, इस स्थल पर एनटीपीसी का पावर प्लांट बनाने का इरादा था. इन सभी सालों तक बेकार पड़े रहने के बाद, अब इस जमीन – कुल 1,050 एकड़ जमीन, लगभग अस्सी घरों और लाखों आम, लीची और दूसरे पेड़ों समेत – को अडानी समूह को 33 साल के लिए सालाना सिर्फ 1 रुपये की मामूली लीज रकम पर दे दी गई.

मोदी सरकार और गोदी मीडिया के लिए "अडानी" नाम विकास की सबसे पक्की गारंटी की तरह पेश किया जाता है. लेकिन पीरपैंती के लोग गोड्डा में अडानी पावर प्लांट या फिर बगल के कहलगांव ब्लॉक में एनटीपीसी पावर प्लांट के अनुभव से अच्छी तरह वाकिफ हैं. इन दोनों प्लांटों में स्थानीय लोगों के रोजगार के बहुत कम सबूत हैं. बड़े पैमाने पर कृषि भूमि और संबंधित आजीविका के नुकसान, पानी की खपत और लोगों के विस्थापन के अलावा, कहलगांव और गोड्डा में सबसे आम शिकायत भयंकर प्रदूषण और उससे होने वाली स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं की है.

पीरपैंती के लोग, जो जबरन और धोखाधड़ी से हुई जमीन छीनने की कार्रवाई के बाद से ही उचित मुआवजे और पुनर्वास की लड़ाई लड़ रहे हैं, उनकी आवाज दबाने के लिए प्रशासन और भाजपा अब धमकी-धौंस पर उतर आए हैं – बेदखली नोटिस भेजे जा रहे हैं, पंचायत प्रतिनिधियों और आंदोलनकारी कार्यकर्ताओं को जेल में डाला जा रहा है. अडानी को दिया जा रहा यह तोहफा सिर्फ पावर प्लांट तक सीमित नहीं है. यहां कोयला ब्लॉक देने और गोड्डा से पीरपैंती तक रेलवे लाइन बिछाने की भी तैयारी है, ताकि झारखंड-बिहार के इस संसाधन-संपन्न इलाके पर अडानी की पूरी पकड़ जम सके. लेकिन पीरपैंती के लोग न्याय की लड़ाई जारी रखने के लिए डटे हुए हैं और इस संघर्ष में सीपीआई(एमएल), सीपीआई(एम), सीपीआई और आरजेडी के स्थानीय संगठन सब एकजुट हैं.

पीरपैंती जाते वक्त हम रानी दियारा के विस्थापित लोगों से भी मिले. 2016 में गंगा कटाव में उनके गांव बह गए थे. कहलगांव ब्लॉक के किसनदासपुर पंचायत और पीरपैंती ब्लॉक के रानी दियारा पंचायत के ये सभी विस्थापित लोग तब से छोड़ी हुई रेलवे लाइनों पर झोपड़ियों में बिना किसी नागरिक सुविधाओं के जीवन बसर कर रहे हैं. इनमें से कई तो मौजूदा वोटर लिस्ट संशोधन में मतदाता सूची से भी बाहर कर दिए गए हैं और अब नाम वापस जुड़वाने के लिए लड़ रहे हैं.

2016 में भागलपुर के रानी दियारा से लेकर 2025 में भोजपुर के जवइनिया तक, गंगा कटाव के शिकार इन परित्यक्त परिवारों की हालत वही है – न कोई पुनर्वास और न सरकार की चिंता. नदी कटाव और जमीन अधिग्रहण के पीड़ितों की समस्या भी एक ही है – विस्थापन और प्रशासन की बेरुखी. और आगे का रास्ता भी एक ही है – एकजुट होकर उचित पुनर्वास और जवाबदेह शासन की लड़ाई लड़ना.

(पृष्ठ 4 का शेष)

में यह समानता है कि दोनों ने ही कई-कई केन्द्रों से परीक्षा फॉर्म भरे. इससे यह सवाल पैदा होता है कि क्या खालिद मालिक और सुरेन्द्र कुमार अपवाद हैं या उत्तराखंड में प्रतियोगी परीक्षाओं के पूरे तंत्र को ऐसे ही लोगों ने हाईजैक किया हुआ है? एक के बाद एक, दो मामलों के खुलासे से तो ऐसा लगता है कि ये अपवाद नहीं कोई षड्यंत्रकारी परिपाटी है. इसलिए यूकेएसएसएससी समेत उत्तराखंड के सारे प्रतियोगी परीक्षा तंत्र को पूरी तरह से खंगाल कर उसमें मौजूद सारे वायरसों को फॉर्मेट करने की जरूरत है. इसके लिए युवाओं को ही निरंतर सरकार और परीक्षा आयोगों पर दबाव बनाए रहना होगा.

– इन्द्रेश मैखुरी

समकालीन
लोकयुद्ध

संपादक
संतोष सहर
फोन : 09334022059

संपादक मंडल
प्रदीप झा, मीना तिवारी, पुरुषोत्तम शर्मा, इंद्रेश मैखुरी, कुमार परवेज, देवकीनंदन बेदिया, मनमोहन कुमार

संवाददाता
कुमार दिव्यम (बिहार), नन्दिता भट्टाचार्य (झारखंड), अरुण कुमार (उत्तर प्रदेश), गिरिजा पाठक (दिल्ली), कैलाश पांडेय (उत्तराखंड), बृजेन्द्र तिवारी (छत्तीसगढ़)

प्रबंध सम्पादक
संतलाल
फोन : 09835298376

कार्यालय
चंद्रशेखर स्मृति भवन, जगत नारायण रोड,
कदम कुआं, पटना - 800 003
ई-मेल - samkaleen.lokyuddh@gmail.com
एक प्रति : पांच रुपये, वार्षिक : 200 रुपये

रामजतन शर्मा द्वारा सीपीआई(एमएल) के लिए चंद्रशेखर स्मृति भवन, जगत नारायण रोड, कदम कुआं, पटना-3 से प्रकाशित एवं जय महावीर ऑफसेट प्रिंटर्स, भिखना पहाड़ी, पटना-4 से मुद्रित